नईदुनिया e-paper

Image View Text View Comment Email Print

Published in 03 Aug-2010 | Print Edition of Naidunia

Page Zoom:

माफी 'सिमी' से या इन 'शहरों' से?

प्रदीप कुमार

बाबरी मस्जिद विध्वंस का एक निष्कर्ष यह है कि भारत के मुसलमान जेहादी-उग्रवादी विचारधारा को तरजीह नहीं देते, भले ही बाबरी विध्वंस को भुला पाना उनके लिए मुश्किल है। इस घटना ने पूरे भारतीय समाज, खासतौर से मुसलमानों को झकझोर कर रख दिया और भारतीय राजनीति में गुणात्मक परिवर्तन के साथ नए अध्याय की शुरुआत हुई।

कट्टरपंथी संगठन 'सिमी' (स्टूडेंट्स इस्लामिक मूवमेंट ऑफ इंडिया) पर प्रतिबंध के विरोध से मुलायम सिंह यादव के हाथ कुछ नहीं लगा। पिछले लोकसभा चुनाव और हाल में डुमरियागंज में मुसलमान मतदाताओं ने उनकी पार्टी को वोट नहीं दिया। अब उन्होंने कल्याण सिंह की सोहबत करने के लिए मुसलमानों से माफी माँगी है, क्योंकि हिन्दुत्ववादियों के हाथों बाबरी मस्जिद के विध्वंस के समय कल्याण सिंह उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री थे। इस घटनाक्रम का एक तात्कालिक निष्कर्ष यह है कि भारत के मुसलमान जेहादी-उग्रवादी विचारधारा को तरजीह नहीं देते। वे 'सिमी' की तरफदारी से बिल्कुल प्रभावित नहीं हुए लेकिन बाबरी विध्वंस को भी भुला पाना उनके लिए मुश्किल है। संघ परिवार के मंदिर आंदोलन, जिसकी परिणिति बाबरी विध्वंस में हुई, ने पूरे भारतीय समाज, खासतौर से मुसलमानों को किस तरह झकझोरा और भारतीय राजनीति में गुणात्मक परिवर्तन के साथ नए अध्याय की शुरुआत किस प्रकार हुई, इसका विश्लेषण डॉ. इरफान अहमद ने अपनी किताब 'इस्लामिज्म एंड डेमोक्रेसी इन इंडिया: द ट्रांसफॉरमेशन ऑफ जमाते इस्लामी' में बारीकी से किया है।

बिहार के एक मदरसे से निकल कर वाया जेएनयू ऑस्ट्रेलिया की मोनाश यूनिवर्सिटी में प्राध्यापक की कुर्सी तक पहुँचने वाले डॉ. इरफान अहमद ने यों तो कई मुस्लिम शहरों का दौरा किया मगर उनके गहन शोध का केंद्र रहा अलीगढ़। जमाते इस्लामी के बहाने उन्होंने जो शोध किया, वह मौजूदा मुस्लिम समाज को समझने में बहुत मददगार हो सकता है। वे अनेक अल्पज्ञात तथ्यों को भी पेश करते हैं, जैसे जमाते इस्लामी के संस्थापक मौलाना मौदूदी शुरू में सेक्युलर-राष्ट्रवादी थे। उन्होंने महात्मा गाँधी पर एक पर्चा भी लिखा था। वे पाकिस्तान आंदोलन के भी विरोधी थे, लेकिन बाद में कट्टरपंथी हो गए और पाकिस्तान की हिमायत करने लगे। उनका कट्टरपन लगातार बढ़ता गया जिसने उन्हें पाकिस्तान में अहमदियों के कत्लेआम तक पहुँचा दिया, जिसके आरोप में उन्हें मौत की सजा सुनाई गई थी।

1951 में मौलाना मौदूदी के पाकिस्तान चले जाने के बाद जमाते इस्लामी को जबर्दस्त आत्ममंथन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ा। सहारनपुर के देवबंद, लखनऊ के नदवा और अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को इस्लामी दायरे में न मानने वाली जमाते इस्लामी ने पुनर्विचार किया। भारत की सेक्युलर लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली को लंबे समय तक इस्लाम के खिलाफ मानते रहना भी मुश्किल हो गया। तब्दीली की इस रफ्तार का पहला बड़ा नतीजा 1982 में सामने आया, जब जमात के नेतृत्व ने अपनी छात्र शाखा 'सिमी' से रिश्ते तोड़ लिए। 1976 में अपनी स्थापना के बाद से सिमी का कट्टरपन बढ़ता गया। वह मौदूदी के रास्ते से हटने को तैयार नहीं थी। 1982 में जमात की नई छात्र शाखा एसआईओ (स्टूडेंट्स इस्लामिक ऑर्गनाइजेशन) का जन्म हुआ। अलीगढ़ विश्वविद्यालय की राजनीति में एसआईओ लोकतांत्रिक दायरे में काम करने लगी, जबकि 'सिमी' उग्रवादी विचारों के प्रसार में लगी रही।

मंदिर आंदोलन बढ़ने के साथ जमाते इस्लामी भारत की सेक्युलर लोकतांत्रिक व्यवस्था की और ज्यादा हिमायती हो गई। बाबरी मस्जिद का ताला खुलने के बाद 1986 में बाबरी मस्जिद आंदोलन समन्वय समिति का गठन हुआ। जमात भी इसमें शामिल हुई। समिति ने स्वतंत्रता दिवस समारोह के बहिष्कार का ऐलान किया। जमात इसमें शामिल नहीं हुई। 1989 में समन्वय समिति दो फाड़ हो गई। गरम मिजाज के लोगों ने ऑल इंडिया बाबरी मस्जिद एक्शन कमेटी बनाई, जमात जिससे दूर रही। बाबरी मस्जिद गिराए जाने के बाद जमाते इस्लामी की प्रतिक्रिया खासतौर से गौरतलब है। जमात के अमीर ने कहा- यह त्रासदी सिर्फ बाबरी मस्जिद की शहादत की नहीं है। फासिस्ट और संकीर्ण पुनरुत्थानवादी ताकतों ने भारत की एकता और अखंडता को भी चोट पहुँचाने की घिनौनी कोशिश की है। जमात के मुखपत्र रैडियंस ने लिखा कि 6 दिसंबर का हादसा भारतीय संविधान, लोकतंत्र और सेक्युलरिज्म को नष्ट करने की एक कोशिश है। उल्लेखनीय है कि भारतीय उपमहाद्वीप में कट्टरपन की संगठित शुरुआत करने वाली जमाते इस्लामी ने बाबरी विध्वंस में इस्लाम के लिए खतरा नहीं देखा।

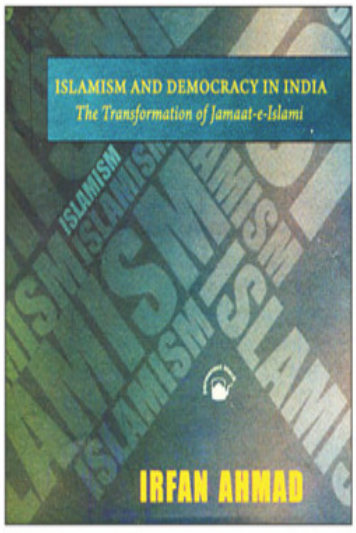

परिस्थितियों के चमत्कार को डॉ. इरफान अहमद 2002 के एक समारोह के रूप में प्रस्तुत करते हैं। जमात की तरफ से आयोजित कार्यक्रम में हिन्दू संतों ने शिरकत की। समारोह में ओम-ओम के उच्चार के साथ शंख ध्वनि हुई। जमाते इस्लामी न तो तिरंगा फहराती थी और न राष्ट्रगति में शामिल होती थी। उसे ये सब इस्लामी उसूलों के खिलाफ लगता था लेकिन बाबरी विध्वंस के बाद ये सभी परहेज दूर हो गए। 1997 आते-आते जमात के नेता अब्दुल्ला अंसारी ने सरेआम ऐलान कर डाला कि मौलाना मौदूदी का सेक्युलरिज्म पर नजरिया सही नहीं था।

बाबरी विध्वंस के बाद मुसलमानों के एक छोटे वर्ग में आए उग्रवाद की नुमाइंदगी सिमी ने की। उसने भारत के विरुद्ध जेहाद की हलफ ली। 'सिमी' के लिए इस्लाम से वफादारी की बस एक शर्त थी-जेहाद। उसके नेताओं ने कहा कि अगर हिन्दू राष्ट्र और राम राज्य हो सकता है, तो निजामे मुस्तफा क्यों नहीं? डॉ. इरफान अहमद की एक जानकारी 'सिमी' पर प्रतिबंध का विरोध करने वाले सेक्युलर नेताओं की आँखें खोलने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। अलीगढ़ में जमाते इस्लामी के कुछ सदस्यों और सिमी के पूर्व सदस्यों ने डॉ. अहमद को बताया कि 'सिमी' जाने-अनजाने पाकिस्तान की जमाते इस्लामी और खुफिया एजेंसी आईएसआई के हाथों खेल रही है और ये दोनों संगठन 1971 का बदला लेने के लिए भारत को तोड़ना चाहते हैं। मुसलमानों की विश्व प्रसिद्ध धार्मिक शिक्षण संस्थाओं, देवबंद और नदवा ने 'सिमी' की जेहादी राजनीति को इस्लाम के प्रतिकूल बताया।

आज आखिर किस मुसलमान से माफी माँगी जा रही है? आखिर, मुसलमान समाज एकरूप नहीं है और न उनकी समस्याएँ। डॉ. इरफान अहमद अलीगढ़ को प्रतीक के रूप में पेश करते हैं। अलीगढ़ में दो मुस्लिम समाजों का अलग-अलग वजूद है। रेलवे लाइन के एक तरफ पुरानी बस्ती है, जो शहर के नाम से जानी जाती है। दूसरी तरफ सिविल लाइंस का इलाका है, जहाँ अशरफ कुलीन रहते हैं। 'शहर' के 90 फीसद मुसलमान अजलफ की श्रेणी में आते हैं, यानी गरीब और कथित नीची जाति वाले। सिविल लाइंस और शहर के मुसलमानों में रसूख बस उतना ही है, जितना सामान्य हिन्दू और मुसलमान में। भारत की सेक्युलर लोकतांत्रिक व्यवस्था सिविल लाइंस को और मजबूत करने से होगी या शहर में गंदगी, गरीबी, बीमारी, निरक्षता और मायूसी को दूर करने से? मुलायम सिंह यादव ही नहीं, भारत के पूरे निजाम और सियासत को मुसलमानों के इन छोटे-बड़े शहरों से माफी माँगनी चाहिए, क्योंकि आजादी के इतने वक्त बाद भी वे बदहाल हैं।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)